भक्ति आन्दोलन का क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्य : दादूपंथ और नाथ सम्प्रदाय

प्रेम सिंह

शोध सारांश

नाभादास ने अपने ग्रंथ भक्तमाल में भक्तों और संतों की उज्ज्वल यश कीर्ति का गान किया है, परन्तु उनके भक्तमाल में नाथ योगी स्थान नहीं पाते हैं। दादूपंथ ने नाथों के महत्व को समझकर उन्हें भक्तों की विशाल परम्परा में स्थान दिया। भक्ति आन्दोलन को दादूपंथ के माध्यम से देखन पर संतमत नाथों के मत का विरोधी नहीं लगता बल्कि दोनों सामान भूमि पर नजर आते हैं। दादूपंथी भक्तमालों से हमें दादूपंथ के विस्तृत दृष्टिकोण का पता चलता है। भक्ति के पूर्व-प्रतिष्ठित अखिल-भारतीय स्वरूप के बरक्स उसकी क्षेत्रीय आधार पर समझ विकसित करने से यह बात सामने आती है।

बीजशब्द : चरित लेखन; दादूपंथ; भक्तमाल; राघवदास; सर्वंगी।

भक्तिकाल को समझने की प्रधान अवधारणाओं में उसके अखिल भारतीय स्वरूप पर हमेशा विद्वानों की दृष्टि रही है। इसी दृष्टि में भक्ति को आधार बनाकर दक्षिण से उत्तर भारत को जोड़ा जाता है और निर्गुण को सगुण से। सूफी परम्परा को संतों और भक्तों के समक्ष दिखाया जाता है वैष्णव परंपरा के समानार्थी तत्त्व शैव परंपरा में खोजे जाते हैं। भक्ति के इस अखिल भारतीय स्वरूप की प्रस्तावना में एक पहलू जो हमेशा छूट जाता है वह यह कि भक्ति का एक क्षेत्रीय स्वरूप भी रहा है, जहाँ के लोक और संप्रदाय-परम्परा के अनुसार भक्ति की उस क्षेत्र विशेष में अपनी विशिष्ट पहचान रही है। इस स्थापना को सबसे प्रभावशाली ढंग से श्रवीदै जतंजजवद भूंसमल ने भक्ति आन्दोलन पर आई अपनी किताब । **Storm Song: Indian and the Idea of the Bhakti Movement** of में रखा है, **"the idea of a unitary bhakti movement needs to be dismantled in favor of one of more independently consisted bhakti clusters."** (पृ.सं.- 328) सिक्ख गुरुओं की परम्परा, महाराष्ट्र के वारकरी सम्प्रदाय, तुलसीदास आदि वैष्णव परम्परा के भक्त और निर्गुण संतों की कई अलग विशेषताओं और क्षेत्रीय विविधताओं को रेखांकित करते हुए वे आगे लिखते हैं, **"the sense that we should be talking about an in&built plurality of bhakti movements rather than a single one."** (वही, पृ.सं.- 327) **John Stratton Hawley** की इन्हीं स्थापनाओं को ध्यान में रखकर इस आलेख में दादूपंथ द्वारा प्रस्तुत भक्ति में नाथों की विचारधारा और नाथ-सिद्धों की प्रधानता का

अध्ययन किया गया है।

भक्तिकाल में नाथ–योगियों की उपस्थिति

नाथ संप्रदाय के व्यक्तित्व इतने प्राचीन, अखिल भारतीय और प्रभावशाली रहे हैं कि उनको ऐतिहासिक रूप से चित्रित करना हमेशा से ही एक दुरूसाध्य काम रहा है। नाथ संप्रदाय की प्राचीनता इस बात से सिद्ध होती है कि इसके आदि प्रवर्तक स्वयं आदिनाथ (शिव) थे। कालांतर में जलंधरनाथ और मत्स्येंद्रनाथ इस संप्रदाय में बड़े प्रभावी योगी हुए। गोरखनाथ जो कि मत्स्येंद्रनाथ के शिष्य थे (जैसा कि प्रसिद्ध है) उन्होंने नाथ संप्रदाय को व्यवस्थित करने का कार्य किया। गोरखनाथ को ठोस ऐतिहासिक कालक्रम में स्थित करना हमेशा से एक चुनौती रही है लेकिन ज्यादातर विद्वान उनका समय 9वीं से 11वीं सदी के मध्य मानते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं, ''मत्स्येंद्रनाथ के कई शिष्य बड़े पंडित और सिद्ध हुए जिनके प्रभाव से यह मत पूरे भारतवर्ष में प्रतिष्ठित हो गया। इन शिष्यों में सबसे प्रधान गोरखनाथ या गोरक्ष थे।..... गोरखनाथ ने ही योग मार्ग के अभिनव रूप हठ्योग को प्रतिष्ठित कराया। प्रसिद्ध महाराष्ट्र भक्त ज्ञानदेव ने अपने आपको गोरखनाथ की शिष्य परंपरा में माना है।'' (कबीर, पृ.सं.– 42) हठ्योग से साधक कुंडलिनी को जाग्रत करता है। सामान्यत: कुंडलिनी अधोमुखी होती है। षट्चक्र का भेदन करके शून्य–चक्र तक पहुँचना हठ्योगी का परम लक्ष्य होता है। साधक घट–साधना तथा नाना प्रकार की योगिक क्रियाओं द्वारा कुंडलिनी शक्ति को ऊपर की ओर या उर्ध्वमुख उद्बुद्ध करके ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। नाथपंथ में बहुत से सिद्ध–योगी हुए जिनमें भर्तृहरि, गोपीचंद, काणेरीनाथ, चरपटनाथ, चौरंगीनाथ, मीननाथ, नेमीनाथ, कन्हीपाव, नागार्जुन, बालनाथ, जड़भरत आदि प्रसिद्ध है। इन योगियों की अद्भुत और आश्चर्यजनक करामातों की सैकड़ों कहानियाँ सारे देश में फैली हुई हैं।

ठीक ही लिखा है कि, ''वैष्णव मतवाद के प्रचार के पूर्व सर्वाधिक प्रचलित मतवाद शैव धर्म था, पर साधारण जनता चमत्कारों पर अधिक विश्वास करती हैं और इन योगियों के चमत्कारों की बड़ी ख्याति थी। सूरदास ने अपने भ्रमरगीत के प्रसंग में इस योग मार्ग की विकटता का प्रदर्शन करके वैष्णव धर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है।'' (हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिकाए पृ.सं.– 67) भक्तिवाद से पूर्व निसंदेह यह सबसे प्रबल मतवाद था। नाथपंथ में स्मार्त आचारों का कोई महत्व नहीं था अत: यह बात उन्हें स्मार्त हिंदू धर्म की विरोधी स्थापित करती है। ''साधारण जनता को सद्गुरु की कृपा के नाम पर आतंकित करने वाले और उन पर रोब जमाने वाले छोटे–मोटे योगियों की एक विराट वाहिनी जरूर तैयार हो गई होगी। ऐसा सचमुच ही हुआ था। ऐसे अलख जगाने वाले योगियों से सारा देश सचमुच ही भर गया था। तुलसीदास जैसे शांत, शिष्ट महात्मा भी इन योगियों की बाढ़ से चिढ़ गए थे। एक जगह अलख जगाने वाले योगी को फटकारते हुए वे कहते हैं – ''तुलसी अलखहिंका लखै, राम–नाम लघु नीच।'' मध्ययुग के संतों की वाणियों के अध्ययन से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है।'' (वही, पृ. सं.– 70) कालांतर में जब उत्तर भारत में भक्ति प्रसारित होने लगी तब नाथ योगियों और निर्गुण मतावलम्बियों के बीच लोक पर प्रभुत्व को लेकर होड़ रहने लगी। इसी तरह 16वीं सदी में राजपूताने (आमेर) के गलता में रामानंदी वैष्णव संप्रदाय की स्थापना में कृष्णदास पयहारी (जो रामानंदी वैष्णव थे) का नाथों के साथ विरोध और लोक में प्रभुत्व स्थापित करने की कहानी प्रसिद्ध है। (हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं.– 84) वैष्णवों की तरह सूफी फकीरों ने भी नाथों और योगियों का सामना किया ''इतिहास और जनश्रुति से इस बात का पता चलता है कि सूफी फकीरों और पीरों के द्वारा

इस्लाम को जनप्रिय बनाने का उद्योग बहुत दिनों तक चलता रहा..... चमत्कारों पर विश्वास करने वाली भोली–भाली जनता के बीच अपना प्रभाव फैलाने में इन पीरों और फकीरों को सिद्धों और योगियों से मुकाबला करना पड़ा जिसका प्रभाव पहले से ही जमा चला आ रहा था। भारतीय मुसलमानों के बीच विशेषत: सूफियों की परंपरा में ऐसी अनेक कहानियाँ चली जिनमें किसी पीर ने किसी योगी को करामात में पछाड़ दिया।'' (वही, पृ.सं.– 11) कहने का अर्थ यह हुआ कि जिन नाथों का चमत्कारिक प्रभाव भारतीय जन–मन में बहुत गहरे से बैठा हुआ था और जिससे जनता आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित थी, वे नाथ योगी भक्ति आंदोलन की निर्मल धारा में जनमानस में अपनी लोकप्रियता खोने लगते हैं। निर्गुण संतों ने, सगुण भक्तों ने और सूफियों ने धीरे–धीरे पूरे भारतीय जनमानस पर अपना जादुई प्रभाव स्थापित कर दिया।

नाथों से वैष्णवों के मतभेद का ठोस उदाहरण नाभादास का भक्तमाल है जिसकी रचना 1600 ई. के आस–पास होती है। हम देखते हैं कि रामानंदी संप्रदाय में नाभादास जब भक्तों और संतों की उज्जवल यश कीर्ति को गाने के लिए अपना भक्तमाल लिखते हैं, जिसे एक तरह से संतों और भक्तों की नामावली एवं गुण–स्तुति की माला कहा जा सकता है। तो वहाँ नाथ योगी स्थान नहीं पाते हैं, अर्थात नाभादास के यहाँ वे संतों और भक्तों की पंक्ति से बाहर हो जाते हैं। हालाँकि कबीर आदि निर्गुण संतों ने नाथ योगियों से बहुत कुछ ग्रहण किया और जनता पर अपना प्रभाव भी स्थापित किया किंतु नाथों को भक्तों और संतों की मुख्यधारा में स्थान न के बराबर ही मिला और उन्हें भक्ति परंपरा के विरोध में ही देखा गया। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने नाथों से संबंधित अपने अध्ययन में अपनी कबीर नामक पुस्तक में बताया कि कबीर पर नाथों का सीधा प्रभाव दिखता है इसीलिए उनके कबीर कभी– कभी नाथ कबीर लगते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं– ''कबीर की वाणी वह लता है जो योग के क्षेत्र में भक्ति का बीज पड़ने से अंकुरित हुई थी।'' (कबीर, पृ. सं. –123) ये सारी बातें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी 20वीं सदीं में लिखते हैं। परंतु दादूपंथ ने नाथों के महत्व को समझकर उन्हें भक्तों की विशाल परम्परा में पहले ही रख दिया था। नाथों को भक्ति में परंपरा में स्थापित करने का जो साहित्यिक कार्य दादूपंथ ने किया वह इस आलेख का मुख्य विषय है, जिसकी चर्चा आगे होगी।

दादूपंथ, भक्तमाल लेखन परम्परा और निर्गुण पंथों की अवधारणा

इतिहास में जिस काल को मध्यकाल कहा गया है, हिंदी साहित्य के क्षेत्र में उस काल में जिस संवेदना को लेकर साहित्य रचना हुई उसमें भक्ति की धारा सबसे अधिक प्रमुखता पाती है। उत्तर भारत में लगभग सभी भारतीय भाशाओं में भक्ति को लेकर प्रमुखता से काव्य–रचना हुई। राजस्थान के संदर्भ में देखा जाए तो मध्यकाल में यहाँ वीर रसात्मक काव्य, दरबारी साहित्य एवं भक्ति विशयक काव्य प्रमुखता से लिखे गए। भक्ति के आलोक में जिस संप्रदाय में सर्वाधिक काव्य रचना हुई तथा संत–बानी संकलन व संतों के चरित लेखन में जो संप्रदाय या पंथ अग्रगण्य हैं उनमें दादूपंथ का स्थान सर्वप्रमुख है। इस पंथ की स्थापना 1603 ई. में दादू दयाल के देवलोक गमन के पश्चात हुई।

दादू का जन्म राजस्थान के बाहर हुआ परंतु दादूपंथ के जो मुख्य केंद्र हैं वे सब भौगोलिक रूप से राजस्थान की परिधि में स्थित है। नरैना जो जयपुर और अजमेर के रास्ते पर स्थित है, दादूपंथ का प्रधान केंद्र है। इसलिए दादूपंथ को एक तरह से राजस्थान का सर्वप्रमुख निर्गुण संप्रदाय कहा जा सकता है। दादू की शिष्य–परंपरा में एक से एक शिक्षित संत हुए जिन्होंने तत्कालीन प्रचलित काव्य परंपराओं जैसे– व्याकरण, शास्त्र, इतिहास, पुराण, वेद–वेदांग

आदि तमाम विषयों पर काव्य लेखन किया। काव्य–रचना के अतिरिक्त संतों की बानी–:संकलन और संतों तथा भक्तों के चरित–लेखन के सन्दर्भ में दादूपंथ का स्थान अग्रणी है। कबीर, रैदास, नामदेव आदि संतों की वाणियों को संग्रहीत करने में दादूपंथ की महत्वपूर्ण भूमिका है।

दादूपंथ में भक्तमाल लेखन की परंपरा बड़ी समृद्ध है। भक्तों, संतों एवं महापुरुषों तथा विशिष्ट व्यक्तियों की गुण–स्तुति या चरित्र वर्णनात्मक साहित्य परंपरा काफी प्राचीन है, पुराणों, रामायण और महाभारत में इस परंपरा का उल्लेखनीय विकास देखने को मिलता है। 'भक्तमाल' जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि यह भक्तजनों की नामावली एवं गुण–स्तुति की एक माला है। जिस प्रकार माला में अनेक मनके होते हैं, उसी तरह भक्तमाल में अनेक संतों एवं भक्तों के नाम तथा उनके जीवन प्रसंगों का संग्रह किया जाता है। भक्तों के चरित्र संबंधी हिंदी रचनाओं में रामानंदी शिष्य परंपरा में महात्मा कृष्णदास पयहारी के शिष्य नाभादास कृत भक्तमाल प्रसिद्ध है जो मध्यकाल पर हो रहे शोध का प्रमुख आधार है। यह ग्रन्थ न केवल उस समय के धार्मिक सम्प्रदायों वरन् वृहत्तर सामाजिक परिवेश को समझने में भी उपयोगी है। यह भक्तमाल 1600ई. के आसपास लिखा गया था। इस रचना ने नई परंपराओं को जन्म दिया तथा इसको आधार बनाकर अनेक नये भक्तमाल लिखे गए।

नाभादास कृत भक्तमाल के महत्व पर यह कथन दृष्टव्य है, ''हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तमाल की रचना एक ऐतिहासिक घटना है। धार्मिक प्रवृत्ति प्रधान देश होने के कारण भारतवर्ष में भक्तमाल अत्यधिक जनप्रिय और समाज में समादरित ग्रंथ बन गया। भक्तमाल की जनप्रियता का अनुमान केवल इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि (रामचरितमानस को छोड़कर) जितनी टीकाएँ इस ग्रंथ की लिखी और जितने स्वतंत्र ग्रंथों की रचना भक्तमाल के आदर्श पर की गई उतने किसी अन्य ग्रंथ के आधार पर नहीं।.....साहित्य और धर्म दोनों ने भक्तमाल का स्वागत समान उत्साह के साथ किया।'' (नाभादास कृत भक्तमाल एक अध्ययन–प्रकाशनारायण दीक्षित, पृ. सं. – 159)

नाभादास के 'भक्तमाल' की टीकाओं में माध्वसंप्रदाय के वैष्णव भक्त प्रियादास की भक्ति रसबोधिनी टीका (1712 ई.) बहुत प्रसिद्ध है। इनके अलावा अनेक कवियों ने अनेक भाषाओं में अलग–अलग छन्दों में नाभाजी के भक्तमाल की टीकाओं में प्रस्तुत किया। ये टीकाएँ संस्कृत, पारसी, उर्दू, ब्रजभाषा, राजस्थानी, मराठी, बंगला, गुरुमुखी (पंजाबी) आदि अनेक भाषाओं में मिलती हैं। सीतारामशरण भगवानदास रूपकला कृत भक्तमाल पर :वार्तिक तिलक' ने भी बहुत प्रसद्धि पाई है। राधावल्लभ–संप्रदाय में ध्रुवदास रचित 'भक्तनामावली', गौड़ीय–संप्रदाय में देवकीनंदन तथा माधवदास कृत 'वैश्णव–वंदना' प्रसिद्ध है, रामरसिक–संप्रदाय में जीवाराम (जुगलिया) कृत 'रसिकप्रकाश' भक्तमाल लिखा जाता है तो हितहरिवंशीय–संप्रदाय में भी 'केलीमाल' नामक ग्रंथ की रचना होती है। रघुराज सिंह, चंद्रदास एवं भारतेंदु हरिश्चंद्र आदि ने भी भक्तमालों की रचना की। वल्लभ–संप्रदाय की 'चौरासी वैश्णवन की वार्ता' तथा 'दो सौ बावन वैश्णवन् की वार्ता' इसी तरह की गद्य रचनाएँ हैं। रामस्नेही संप्रदाय में अनेक भक्तमाल लिखे जाते हैं जिनमें रामदास, दयालदास, किशनदास, सुखसारण आदि द्वारा लिखित भक्तमाल बहुत प्रसिद्ध है। निरंजनी संप्रदाय में प्यारेराम भक्तमाल लिखते हैं। कहने का अर्थ यह हुआ कि नाभादास कृत भक्तमाल कई नई परम्पराओं का उपजीव्य बना।

भक्तमाल की इस परंपरा में नाभादास के बाद दादूपंथी राघवदास कृत भक्तमाल को सर्वाधिक प्रसिद्धि मिली। राघवदास के भक्तमाल के महत्त्व को समझने के लिए नाभादास के भक्तमाल के साथ उसका अति संक्षिप्त तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है। नाभादास ने भक्त, भक्ति, भगवान और गुरु को तात्विक रूप से एक ही मानते हुए भक्तों के महत्व को प्रतिष्ठित किया। उन्होंने कहा कि भक्त, भक्ति, भगवान और गुरु इन चारों के नाम अलग है लेकिन इनकी व्या. प्ति, इनका स्वरूप एक जैसा है–

भक्त, भक्ति, भगवंत, गुरु, चतुर नाम वपु एक।

इनके पद बंदन किये, नाशहिं विघ्न अनेक।। (श्रीभक्तमाल – प्रियादासजी प्रणीत टीका – पृ. सं. – 1)

नाभादास ने पहली बार वैश्णव भक्ति के चतुरू सम्प्रदायों को स्थापित किया जिनमें रामानुज. ाचार्य का 'श्री सम्प्रदाय', विश्णुस्वामी का 'शिव सम्प्रदाय', निम्बार्क स्वामी का 'सनकादिक सम्प्रदाय' तथा मध्वाचार्य का 'ब्रह्म सम्प्रदाय' आते हैं। (वही, पृ. सं. –257, 258) यह चतुरू सम्प्रदाय की जो अवधारणा है तथा भक्ति के दक्षिण से उत्तर की ओर आने की जो हमारी समझ है, नाभादास पहली बार अपने भक्तमाल में हमारे सामने रखते हैं।

नाभादास के भक्तमाल के अनुसरण में ही राघवदास ने अपने भक्तमाल की रचना की। राघवदास के भक्तमाल का फलक विस्तृत है इसमें ऐसे कई संतों और भक्तों का उल्लेख है जिनका नाभ. ाादास के भक्तमाल उल्लेख नहीं है। नाभादास ने केवल वैश्णव भक्तों को ही स्थान दिया है परंतु राघवदास ने दादूपंथी संतों के अतिरिक्त नाथ, रामानुज, विष्णुस्वामी, कबीर, नानक, मुसलमान और चारण भक्तों तथा अन्य मतावलम्बियों को भी शामिल कर के एक व्यापक अध ाारशीला रखी एवं संतों और भक्तों को बड़े आदर सहित सम्मान दिया। जिससे राघवदास की यह रचना प्रौढ़, उपयोगी एवं महत्तपूर्ण मानी जाती है। इस भक्तमाल पर इन्हीं के शिष्य चतु रदास द्वारा टीका की गई है, जिसमें भक्तों का चरित्र विस्तार से दिया गया है। राघवदास ने संत चरित्र लेखन को लेकर नाभादास से और बड़ा दृष्टिकोण अपने भक्तमाल में रखा। नाभादास के भक्तमाल में उस काल के दो बड़े संत नानक और दादू स्थान नहीं पाते हैं। नाभादास के वैश्णव चतुरू सम्प्रदाय से प्रभावित होकर ही राघवदास अपने 'भक्तमाल' में चार निर्गुण सम्प्रदायों– कबीरपंथ, नानकपंथ, दादूपंथ और निरंजनी सम्प्रदाय की अवधारणा रखते हैं –

छप्पै नानक कबीर दादू जगन, राघो परमात्म जपे।।
नानक सूरज रूप, भूप सारै परकासे।
मघवा दास कबीर, ऊसर सूसर बरखा–से।
दादू चंद सरूप, अमी करि सब कौं पोषे।
बरन निरंजनी मनौं, त्रिशा हरि जीव संतोषे।
ये च्यारि महंत चहुँ चक्क मैं, च्यारि पंथ निर्गुण थपे।
नानक कबीर दादू जगन, राघो परमात्म जपे।। (पृ. सं. –175)

दादूपंथ में चार भक्तमाल लिखे गए जिसमें जग्गाजी, चैनदास, राघवदास एवं चारण ब्रह्मदास

प्रमुख भक्तमालकार है।

दादूपंथी भक्तमालों में नाथ

दादूपंथी भक्तमाल नाथों को प्रमुखता से स्थान देते हुए उन्हें संतों और भक्तों की मुख्यधारा से जोड़ते हैं। दादूपंथी जग्गाजी और चैनजी ने अपने–अपने भक्तमाल में नाथों को बड़े सम्मान के साथ स्थान दिया है। चैनजी ने भक्तों के वर्णन के क्रम में नाथों को सर्वप्रथम स्थान दिया और गोरखनाथ, भर्तृहरि, गोपीचंद, कणेरी, चरपटनाथ, हाली, पृथ्वीनाथ, अजयपाल, नेम . ीनाथ, जलन्धरनाथ, कन्हीपाव, धूंधलीमल, कन्थड़, भङ्गी, विप्रानाथ, नागार्जुन, बालना. थ, चौरंगी, मिंड़्कीपाव, सिद्ध गरीबदेव, लहरताली, चुणकर, गणेश, जड़भरत, शंकर सिद्ध, घोड़ाचोली, आजू–वाजू, सुकलहंस आदि नाथों को बड़े सम्मान के साथ अपने भक्तमाल में स्थापित किया तथा उनकी शिक्षाओं का भी बहुत संक्षेप में संकेत किया है जैसे– गोविन्द का भजन करो, हरी के मार्ग पर चलो, उस समर्थ प्रभू का भजन करो आदि–

> गोरख भरतरी गोपीचंद। इनहूं कह्यौ भजौ गोविंद।।
>
> संत कणेरी चरपट हाली। प्रिथीनाथ कह्यौ हरी मार्ग चाली।।
>
> अजैपाल नेमीनाथ जलंधी कन्हीपाव। इनहूं कह्यौ भज समरथ–राव।।
>
> धूंधलीमल कन्थड़ भङ्गी विप्रानाथ। इनहूं कह्यौ हरी देवे हाथ।।
>
> नागार्जुन बालनाथ चौरंगी मिंड़्कीपाव। इनहूं कह्यौ भज समरथ–राव।।
>
> सिद्ध गरीबदेव लहर ताली। चुणकर कह्यौ लायउनमनी ताली।।
>
> गणेश जड़भरत शंकर सिद्ध घोड़ाचोली। इनहू कह्यौ राम लै रोली।।
>
> आजू–वाजू सुकलहंस ताविया भाई। इनहूं कह्यौ गोविंद गुण गाई।। (वही, परिशिष्ट–1, जग्गाजी कृत भक्तमाल, पृ. सं. –275)

चैनजी से आगे बढ़ते हुए जग्गाजी ने कुछ और नाथों को शामिल किया है जिनमें मछन्दरनाथ, चौरंगीनाथ, नित्यनाथ, सतीनाथ आदि प्रमुख है। जग्गाजी के भक्तमाल की खास बात यह है कि इन्होंने नाथों के नामोल्लेख के साथ उनके जीवन से जुड़ी कुछ घटनाओं का संकेत मात्र भी किया है, साथ ही जग्गाजी ने उनकी शिक्षाओं को भी अति संक्षेप में उद्धृत किया है–

जड़–भरत रघु गुणदत्त गुँसाई । मछिंदर गोरख लगै सुनांई।।

बालनाथ औघड़ सावरानंदू .....मांङ्की पाव सुभये सभागे।।

कंथड़ीपाव चिणगी स्यालसेटू अलसनाथ जोगी पहुंचे थेटू। (वही, परिशिष्ट–2, चैनजी कृत भक्तमाल, पृ. सं.–281 से 282)

इस तरह हम देखते हैं कि जग्गाजी व चैनजी ने अपने–अपने भक्तमाल में नाथों के नामों का उल्लेख प्रमुख संतों के साथ किया है। इसी परंपरा में राघवदास ने अपने भक्तमाल में नाथों को व्यवस्थित रूप से वर्णित किया है। नवनाथों का वर्णन दृष्टव्य है–

मनहर छंद ऊँकारे आदिनाथ उदैनाथ उतपति,
उंमांपति स्यंभू सती तन मन जित है।
संतनाथ विरंचि संतोषनाथ विश्णुजी,
जगंनाथ गणपति गिरा कौ दाता नित है।
अचल अचंभैनाथ मगन मछिंद्रनाथ,
गोरख अनंत ग्यांन मूरति सुबित है।
राघो रक्षपाल नऊंनाथ रटि रात दिन,
जिनकौ अजीत अबिनासी मधि चित है।। (वही, पृ. सं. – 138)

उपर्युक्त छंद के अन्तर्गत आदिनाथ, उदयनाथ, उमापति (स्वयंभू), संत (सत्यनाथ), संतोषनाथ (विश्णुजी), जगनाथ (गणपति) के साथ अचंभनाथ, मच्छेंद्रनाथ, गोरखनाथ को सर्वप्रथम स्थान दिया है। (वही, अनुक्रमणिका से, पृ.सं. – 4)

राघवदास नाथों से संबंधित जोगी दर्शन के अन्तर्गत अष्ट सिद्ध नवनाथका वर्णन इस प्रकार किया है–

छप्पै अब 1आदिनाथ 2मछिंद्र(नाथ), 3गोरख 4चरपट नाथय।
5धर्मनाथ 6बुद्धिनाथ, 7सिद्धजी कंथड़ 8साथय।
9बिंदनाथ 1चौरंग, 2जलंधी 3सतीकणेरी।
4भड़ंग 5मिंड़कीपाव, 6धूंधलीमल धर फेरी।
7घोड़ाचोली 8बालगुदाई, सबकौं नाऊं माथ।
पहल कबित सिध अष्ट है, प्रथम जांनि नवनाथ।। (वही, पृ. सं. – 139)

तत्पश्चात 24 प्रमुख नाथों के नाम गिनाये हैं जो इस प्रकार हैं–

1चूणकर 2नेतिनाथ, 3बिप्र 4हाली 5हरताली।
6बालनाथ 7औघड़, 8आई 9नरवै कौंन्हाली।
10सुरतिनाथ 11भरथरी, 12गोपीचंद 13आजू 14बाजू।
15कन्हिपाव 16अजैपाल, कियो सब काजू।
17सिधगरीब 18देवलबैराग, 19चत्रनाथ 20प्रथीनाथ अब।
21सुकलहंस 22रावल 23पगल, राघव के सरताज सब।। (वही, पृ. सं. – 139)

प्रमुख नाथों के नामोल्लेख के उपरान्त मत्स्येंद्रनाथ, जलन्धरनाथ, गोरखनाथ, चौरंगीनाथ, धूंधलीमल, भरथरी, गोपीचंद, चर्पटनाथ व पृथ्वीनाथ के वर्णन को विस्तार से किया है। मत्स्येंद्रनाथ संबंधी छप्पय इस प्रकार है–

महादेव मनजीत तैं, नाथ मछिंदर अवतरे।।

अष्टांग जोग अधपति, प्रथम जम नियमन साधे।

आसन प्राणांयांम प्रत्याहार, धारणा ध्यांन समाधि।

शष्टचक्र वेधिया, अष्ट कुंभक सौ किया।

मुद्रा दसम लगाइ, बंध त्रिय ता मधि दीया।

भक्ति सहित हठजोग करि, जन राघौ यौं निसतरे।

महादेव मन जीत तैं, नाथ मछिंदर अवतरे।। (वही, पृ. सं. – 139)

मत्स्येंद्रनाथ को अष्टांगयोग के अधिपति के रूप में वर्णित करते हुए राघवदास कहते हैं कि मत्स्येंद्रनाथ ने हठ्योग को भक्ति के साथ किया।

जालन्धरनाथ के वर्णन के प्रसंग के अन्तर्गत उनकी आज्ञा से गोपीचंद को अपनी माता के पास भिक्षा लेने हेतु भेजने की कथा तथा अन्य प्रसंगों को भी व्यक्त किया है–

यमलोक जलंधी को सिरै, गुफा कूप करि मांनियौ।।

दक्षा लेणै काज, मात गोपीचंद मेल्यौ।

गुरु कही विप्र जैसाखि, समझि बिन कूपहि ठेल्यौ।

उहां ही लगी समाधि, अलख अभिअंतर ध्यायो।

सपत धात फूतला, भसम करि बाहरे आयौ।

जन राघौ गोपीचंद कौं, अमर कीयो सिख रांनियौ।

यम लोक जलंधी को सिरै, गुफा कूप करि मांनियौ।। (वही, पृ. सं. – 139)

गोरखनाथ का महत्त्व राघवदास के भक्तमाल में विस्तार से प्रतिपादित हुआ है। गोरखनाथ को संसार सागर के पार जाने हेतु कर्णधार के रूप में प्रस्तुत किया है, साथ ही उन्हें राजा भर्तृहरि आदि के उद्धारक, परमार्थी, पर्चाधारी आदि बताया है जो इस प्रकार है–

संसार अध्व निसतारनै, करनधार गोरख–जती।।

भूप भरथरी आदि, कोड़ि तेती तीउ धारा।

सबद श्रवण जाधर्यौ, प्रजा का अंत न पारा।

परमारथ कै काज, आप ग्यारह बर बीका।

सिध कीये पाषांण, तीर गोदार नदी का।

नाद बजाये बिद्रपुर, परचा दीया बरकती।

संसार अबध निसतारनै, करनधार गोरख–जती।। (वही, पृ. सं.–139, 140)

इंदव छंद इंद ज्यूं जिंद की जीवनि गोरख, ग्यांन–घटा वरख्यौ घट धारी।

नृप निन्याणंवै कोड़ि कीये सिध, आतम और अनंतन तारी।

विचरै तिहुंलोक नहीं कहूं रोक हो, मया कहा बपुरी पचिहारी।

स्वादन सप्रस यौं रह्यौ अपरस, राघो कहै मनसा मन जारी।। (वही, पृ. सं.–140)

राघवदास ने अपने भक्तमाल में चौरंगीनाथ तथा धुंधलीमल संबंधी वर्णन के अन्तर्गत उनके जीवन से जुड़ी घटनाओं का उल्लेख किया है चौरंगीनाथ को धर्मशील तथा सत्य की रक्षा करने वाले बताते हुए धुंधलीमल द्वारा नगर में भीख माँगने, लकड़ियाँ बेचकर जीवन–यापन करने आदि के प्रसंग को स्थान दिया है। भर्तृहरि और गोपीचंद के वर्णन को विस्तार दिया है। भर्तृहरि द्वारा भोग को भ्रम मानकर भक्ति करना, तीव्र वैराग्य का होना, गुरु गोरखनाथ की कृपा से मोह का नाश होना आदि प्रसंग आये हैं। गोपीचंद द्वारा अपने गुरु जलंधरनाथ के उपदेश से प्रभावित होकर अपने बंगाल देश को त्याग देने के साथ ही अपनी सोलह सौ रानियों, हाथी–घोड़े, कुल, बंधु–बांधव, हीरा, मोती, माणिक आदि से जड़ित सिंघासन को त्याग देने की प्रसिद्ध कथा का वर्णन किया है। गोपीचंद द्वारा अपनी माता से भिक्षा लेने जाने की करुण कथा का भी उल्लेख राघवदास ने किया है। इसी तरह चर्पटनाथ और पृथ्वीनाथ के जीवन प्रसंग को रेखांकित करते हुए पृथ्वीनाथ की अकबर के साथ आगरा में मुलाकात होने की ऐतिहासिक बात का भी उल्लेख किया है।

ऊपरी उद्धृत छंदों और विवरणों में नाथ योगियों से जुड़ी अंतरकथाएँ, उनकी साधना पद्धति, उनके उपदेश ऐतिहासिक तथ्य को बड़े ही प्रामाणिक तौर पर राघवदास ने जुटाए हैं।

गोरखनाथ की वाणी का प्रभाव न केवल धार्मिक संप्रदायों पर पड़ा वरन् लोक में भी उनका प्रभाव बहुत जबरदस्त रहा। इसीलिए तुलसीदास को कहना पड़ा 'गोरख जगायो जोग भक्ति भगायो लोक' अर्थात गोरखनाथ ने लोक में भक्ति के स्थान पर हठ्योग को स्थापित किया जिसके बरक्स तुलसीदास भक्ति की पुन: स्थापना करते हैं (हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं. – 34) जिससे नाथ मुख्यधारा से हट जाते हैं। लेकिन दादूपंथ ने नाथों को पुन: भक्तों की परंपरा में स्थापित किया। आज नवनाथ और चौरासी सिद्धों की बात हम करते हैं यह मत मध्यकाल में दादूपंथ में इसी दृढ़ता के साथ स्थापित था या नहीं यह तो बहस का विषय हो सकता है पर संतों और भक्तों के साथ नाथों को स्थान देने में दादूपंथ अग्रणी था इसमें कोई शक नहीं।

दादूपंथी वाणी संकलनों में नाथ

दादूपंथ में संतवाणी संकलन की दो प्रमुख धाराएँ मिलती हैं– एक तो पंचवाणी की धारा और दूसरी सर्वंगी की धारा। पंचवाणी में पाँच प्रमुख संतों की वाणियों को स्थान दिया जाता था जिनमें नामदेव, रैदास, हरिदास, कबीर, दादू आदि महत्त्वपूर्ण संत आते हैं जिन्हें लेकर अलग–अलग पंथों और सम्प्रदायों की स्थापना हुई। ऐसी पंचवाणियाँ मध्यकाल पर कार्य कर रहे अध्येताओं और पाठकों के लिए आज भी उपयोगी हैं। सर्वंगी में संतों और भक्तों की संख्या सौ से भी अधिक होती है जिनमें सगुण, निर्गुण, सूफी धारा के प्रमुख संतों–भक्तों के पदों को संकलित–संग्रहीत किया जाता था। अर्थात मध्यकाल में दादूपंथ एक ऐसा विशाल विचारध ाारात्मक आधार रख रहा था जिसमें उस काल के कई सम्प्रदायों के कवि, संत एवं भक्त एक साथ स्थान पा रहे थे।

सर्वंगी दादूपंथ की एक मुख्य परंपरा है जिसमें संतों, भक्तों, नाथों आदि की रचनाओं को सम्मिलित कर उन्हें अंगों में बाँटा गया। अंगों में बाँटने की परंपरा एक तरह से दादूपंथ की

अनूठी परंपरा है। ऐतिहासिक रूप से भी सबसे पहले दादूपंथ में ही संतों की वाणियों को अंगों में विभाजित करने की परंपरा मिलती है। संतों की वाणियों का सबसे पुराना ग्रंथ गोइंदवाल पोथी है जो नानकपंथ का है। लेकिन नानकपंथ की यह गोइंदवाल पोथी जो गुरु ग्रंथ साहब का मुख्य आधार है वह 1572ई. में लिखी तो जाती है पर वह रागों में विभाजित है उसमें अंग नहीं मिलते। जबकि 16वीं सदी के अंत में संपादित होने वाली दादू की वाणी अंगों में विभाजित होती है। ''आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने (कबीर साहित्य की परख और उत्तरी भारत की सन्त परम्परा) में इसका उल्लेख किया है। संतबानी को अंगों में बाँटने की परम्परा रज्जबदास द्व ारा ही शुरू हुई, जब उन्होंने अपने गुरु की वाणी को अंगबंधू के रूप में संकलित किया। उनके अनुसार अंगों में विभाजित करने का कोई उदाहरण स्वयं रज्जब के सामने रहा होगा या रज्जब ने खुद इस परम्परा की शुरुआत की इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता।'' (आलोचना– त्रैमासिक, पृ. सं. – 54) आचार्य क्षितिमोहन सेन ने रज्जब के अंगबंधू को ग्रंथन कला का आदर्श कहा है। अर्थात् वाणी को अंगों में विभाजित करने की जो काव्य कला है वह एक आदर्श काव्य कला है। रज्जबदास की सर्वंगी भी प्रमुख ग्रंथ है जो अंगों में विभाजित है। ऐसे ग्रंथ सीध ो–सीधे प्रवचन और संतों की वाणियों की शिक्षा देने से जुड़े हुए हैं। इनमें गुरु कौ अंग, ज्ञान कौ अंग, प्रेम कौ अंग आदि अंग विभाजन मिलते हैं। दिलचस्प बात यह है कि इन सर्वंगियों में निर्गुण और सगुण दोनों भक्त स्थान पाते हैं। सूरदास और तुलसीदास के पद भी मिलते हैं। यहाँ तक कि गोरखनाथ की बाणी भी अंगों में विभाजित होकर संपादित होती है जिस पर दादूपंथ खास कर रज्जब का प्रभाव स्पष्ट है। पारसनाथ तिवारी द्वारा संपादित 'कबीर ग्रंथावली' का स्रोत भी दादूपंथी साहित्य ही माना जाता है।

रज्जबदास कृत सर्वंगी में नाथों के पदों को अंगों के विषय के आधार पर यथा स्थान जगह दी है। गोरखनाथ, चरपटनाथ आदि नाथ बड़े आदर के साथ सम्मिलित किये गये हैं। रज्जब की सर्वंगी से गोरख का यह पद दृष्टव्य है–

> अवधू जाप जपौ जपमाली चीन्हौं, जाप जप्या फल होई
> अगम जाप जपंता गोरख, चीन्हत बिरला कोई।
> कवल वदन काया करि कचन, चौतनि करि जपमाली।
> अनेक जनमनां पातिग छूटैं, जपंत गोरख चवाली।। (पृ. सं. – 107)

दादू की शिष्य परंपरा में सुंदरदास हुए जिन्हें आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'शास्त्र ज्ञान प्रवीण कवि' कहा उन्होंने अपने ग्रंथ 'ज्ञान–समुद्र' में योग को भक्ति के साथ स्थापित किया। उनका यह ग्रंथ निरंजनी आदि परवर्ती संप्रदायों के अलावा सगुण कवियों द्वारा भी बड़े पैमाने पर पढ़ा गया। सुंदरदास ने 14वीं सदी के 'हठ्योग प्रदीपिका' नामक संस्कृत ग्रंथ का बनारस में जाकर अध्ययन किया एवं संतों व कवियों के लिए ब्रजभाषा में उसे प्रस्तुत किया। उन्होंने हठ्योग के साथ भक्ति और अद्वैत वेदांत को मिलाकर सर्वांगयोग की सृष्टि की जहाँ योग एवं भक्ति दो अलग–अलग दर्शन न होकर एक दूसरे के अन्योन्याश्रित दर्शन बन गये। सुन्दरदास के इस दृष्टिकोण ने कालान्तर में इतिहास लेखन में भक्ति एवं योग को विवेचित–विश्लेषित करने के दृष्टिकोण को बहुत गहरे से प्रभावित किया।

> भक्तियोग हठ्योग पुनि, सांख्य सु योग विचार।
> भिन्न भिन्न करि कहत हौं, तीनहुं कौ विस्तार।।

सनकादिक नारद मुनी, शुक्र अरु ध्रुव प्रहलाद।
भक्ति योग सो इन कियौ, सद्गुरु कैं जु प्रसाद।।
आदिनाथ मत्सेंद्र अरु, गोरश चर्पट मीन।
काणेरी चौरंग पुनि, हठ सु योग इनि कीन।।
ऋषभदेव अरु कपिल मुनि, दत्तात्रेय वशिष्ठ।
अष्टाबक्र रु जड़भरत, इन कै सांख्य सुदृष्टा। (सुन्दर ग्रंथावली – रमेशचन्द्र मिश्र, पृ. सं. – 81)

सुन्दरदास ने सनकादिक, नारद मुनी, शुक्र, ध्रुव और प्रहलाद को भक्ति योग के प्रथम आचार्य के रूप में माना है क्योंकि इन भक्ताचार्यों ने भक्तियोग की चर्या की है वहीं आदिनाथ को हठ्योग का प्रथम आचार्य स्वीकार किया है, इसी क्रम में मत्स्येंद्रनाथ, गोरखनाथ, चर्पटनाथ, मीन नाथ, काणेरीनाथ चौरंगीनाथ आदि नाथों को सुन्दरदास हठ्योग के आचार्यों के रूप में स्थान देते हैं। भक्ति के मार्ग में चित्त–शुद्धि या पंचेन्द्रियों की शुद्धि में हठ्योग किस तरह अपनी भूमिका निभाता है उस को सुन्दरदास ने भक्ति के परिप्रेक्ष्य स्पष्ट किया है। निर्गुण भक्ति में नाथों के हठ्योग को भक्ति के मार्ग में प्रधान स्थान दादूपंथ देता है जिसमें सुन्दरदास का 'सर्वांगयोग प्रदीपिका' ग्रंथ महत्वपूर्ण है। कहने का मतलब यह है कि नाथपंथी विचारधारा को मध्यकाल में लोकप्रिय बनाने एवं प्रचारित करने में दादूपंथ का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

दादूपंथ में नाथों के महत्व का ऐतिहासिक आधार

अंत में प्रश्न यह उठता है कि दादूपंथी साहित्य नाथों को अपने अंदर स्थान क्यों देता है? इसके तीन प्रमुख कारण इस प्रकार हैं–

पहला कारण भक्ति के आगमन से पूर्व उत्तर भारत में नाथों का जबरदस्त प्रभुत्व और संत–प . रम्परा को उसका प्रदेय है। उत्तर भारत में भक्तिमत के उद्भव के साथ विभिन्न सम्प्रदाय जिसमें दादूपंथ भी शामिल है, जिस भक्ति को प्रचारित करना चाह रहे थे उसमें प्रेम की स्थाप . ना, परमात्मा से प्रेम, लौकिक प्रेम से पारलौकिक प्रेम की यात्रा आदि बड़े ही प्रभावी ढंग से सा . हित्य में स्थान पाते हैं अर्थात् प्रेम का आधार ग्रहण कर भक्ति लोक में प्रतिष्ठित होती है तथा लोक से जुड़ने और उससे शक्ति पाने की कोशिश करती है। इसलिए 16वीं सदी में सारे भक्ति संप्रदायों में हम देखते हैं कि वे या तो नाथों की आलोचना करते हैं या नाथों को अपने अंदर स्थान देते हैं। प्रेमाख्यान साहित्य के सूफी ग्रंथों में नाथों व योगियों को अपने अंदर स्थान दिया है। सूफियों यहाँ भी नायक नाथ (योगी) का वेश धारण करके प्रियतम को पाने की यात्रा शुरू करता है, जिसमें शरीर को तपाना, विरह की आग में जलाकर राख बना देना आदि सभी क्रियाएँ नाथों के सौंदर्यशास्त्र के अनुरूप है। मीरा भी अपने प्रियतम से मिलने हेतु जोगी बनने की बात कहती है। अर्थात् साधना के मार्ग में त्याग और तप की नाथों की यह आधारशिला लोक में बड़े प्रभावशाली ढंग से स्थापित थी। जब दादूपंथ का विकास होता है तो उसमें नाथप . थी विचारधारा और उनका सौंदर्यशास्त्र इसीलिये बड़े प्रभावी ढंग से स्थान पाते हैं।

दूसरा कारण – 15 वीं सदी में एक नए तरह के योग अर्थात हठ्योग का उत्तर भारत में प्रभ ावशाली बनना। यह हठ्योग अपने पूर्वकालीन तंत्र परम्परा से अलग था। स्वत्वराम कृत हठ्योग

प्रदीपिका इसी काल की रचना है। पातंजलयोग इस सदी तक आते–आते हठ्योग पर आध ारित हो जाता है। पूर्ववर्ती सारी योग साधनाओं जिसमें शैव, कौल, वज्रयानियों का वामाचार, शव साधना, पंच मकार, तन्त्र आदि पर हठ्योग की स्थापना होती है और गोरखनाथ को उसी हठ्योग के साथ जोड़ा जाता है। हठ्योग ने शारीरिक अनुशासनात्मक साधनाओं द्वारा देह शुद्धि, प्राणवायु की सक्रियता तथा मन के सम्मार्जन जैसी नवीन क्रियाएँ समाज में स्थापित की जिसने संतों को बहुत गहरे में आकर्षित और प्रभावित किया। क्योंकि संत भी देह–शुद्धि और चित्त–शुद्धि पर बहुत जोर देते हैं। गोरखनाथ ने जीवन जीने अनुशासन बनाए हैं, लोक में उनकी यह साखी बहुत प्रसिद्ध है–

हबकि न बोलिबा ठबकि न चालिबा धीरे धरिबा पांव।

गरब न करिबा सहजै रहिबा भणत गोरख राव।।

गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित उक्त सारे जीवनादर्शों को संतमत अपने अंदर समाहित कर लेता है। उदाहरण के लिए निर्गुण संत घट साधना की बात करते हुए परमात्मा को मनुष्य के भीतर खोजने की बात करते हैं। परमात्मा को भीतर खोजने के लिए व्यक्ति को अपने आपको बाहरी दुनिया से काट्ना पड़्ता है। बाहरी दुनिया से कट्ने और अंदर से परमात्मा से जुड़्ने का दर्शन हठ्योग का आधार है जिसमें ज्ञान–इंद्रियों को वश में करते हुए कुंडलिनी का जागरण किया जाता है और आत्मा–परमात्मा से एकाकार होने की बात की जाती है। यह बात दादूपंथ के साथ सारे निर्गुण संप्रदायों के लिए आकर्शक थी, अत: हठ्योग के उस हिस्से को भक्ति ने अपने अंदर पूर्ण रूप से समाहित कर लिया। हजारीप्रसाद द्विवेदी के ही कथन को आगे बढ़ाते हुए यह कहा जा सकता है कि योग के साधनात्मक तत्त्वों को भक्ति में समाहित करते हुए संतों और भक्तों ने उसमें प्रेम तत्त्व को स्थापित कर उसे और उच्चता प्रदान की।

तीसरा कारण – भक्ति आन्दोलन को दादूपंथ के माध्यम से देखना, जिससे हमें संतमत ना थों के मत का विरोधी नहीं लगता बल्कि दोनों सामान भूमि पर नजर आते हैं। निर्गुण–सगुण विभाजन के मुख्य आधार वर्णाश्रम के विरोध को ही लें तो जैसा कि हमने नाभादास के प्रसंग में देखा कि वैश्णव मत में नाथों को स्थान नहीं मिलता है क्योंकि वैश्णव परंपरा वर्णाश्रम ध र्म की उतनी विरोधी नहीं थी। वह वर्णाश्रम के अंदर जो खराबियाँ थी उसको मिटाना चाहती थी न कि वर्णाश्रम को। इसके विपरीत निर्गुणियों के यहाँ वर्णाश्रम धर्म का पुरजोर विरोध है। निर्गुणियों का वर्णाश्रम विरोध नाथों–सिद्धों से चले आ रहे वर्णाश्रम विरोध से जुड़ जाता है। यह बात जब हम भक्तिकाल के प्राथमिक स्रोतों का अध्ययन करते हैं, विशेषकर ऐतिहासिक बोध से जुड़े भक्तमाल जिसमें राघवदास और नाभादास के भक्तमाल की जब तुलना करके देखते हैं, तो हमें दादूपंथ के विस्तृत दृष्टिकोण का पता चलता है। इसी वजह से दादूपंथी भक्तमालों में भक्त और नाथ दोनों भक्ति में समान स्थान पाते हैं। यही बात भक्ति के पूर्व–प्र तिष्ठित अखिल–भारतीय स्वरूप के बरक्स उसकी क्षेत्रीय आधार पर समझ विकसित करने से सामने आती है जिसका उल्लेख इस आलेख की शुरुआत में किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

Hawley, John Stratton - *A Storm of Songs: India and the Idea of the Bhakti Movement,* Harvard University Press, 2015.

द्विवेदी, हजारीप्रसाद – कबीर– राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1 बी. नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नयी दिल्ली 110002, उन्नीसवीं आवृत्ति 2014 ई.।

द्विवेदीए हजारीप्रसाद – हिन्दी साहित्य की भूमिका ''राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. 1 बी. ने ताजी सुभाष मार्ग,दरियागंज, नयी दिल्ली 110002, नौवां संस्करण 2017 ई.।

शुक्ल, आचार्य रामचंद्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास – नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, बाईसवां संस्करण, संवत 2045।

नाभादास कृत भक्तमाल एक अध्ययन, लेखक–प्रकाशनारायण दीक्षित, साहित्य भवन प्रा इवेट लिमिटेड, इलाहाबाद। प्रथम संस्करण 1961 ई.।

नाभादास, श्रीभक्तमाल ''श्री प्रियादासजी प्रणीत टीकाश्कवित्त, श्री सीतारामशरण.भग वानप्रसाद रूपकला विरचित भक्तिसुधास्वाद तिलक, प्रकाशक ''तेजकुमार बुकडिपो (प्रा.) लिमिटेड, लखनऊ, उत्तराधिकारी– नवलकिशोर–बुकडिपो, लखनऊ, नौवां संस्करण, सन– 2005 ई.।

नाहटा, अगरचन्द (सम्पादक) – राघवदास कृत भक्तमाल (चतुरदास की टीका सहित), प्रकाशक राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। संवत् 2021 विक्रमी।

आलोचना– त्रैमासिक, (आलेख–मध्यकालीन संतबानी संकलन की सरंवगी परम्परा और भक्ति संवेदना – दलपतसिंह राजपुरोहित), सहस्राब्दी अंक इकतीस, अक्टूबर–ि दसम्बर 2008, प्रधान सम्पादक–नामवरसिंह, संपादक–अरुण कमल, राजकमल प्रकाशन।

सिंहल, प्रो. धर्मपाल (सम्पादक एवं व्याख्याकार) – संत श्री रज्जब द्वारा संकलित सरबंगी (गुनगंजनामा सहित)–''दीपक पब्लिशर्ज, माई हीरां गेट, जालन्धर 144008, प्रथम संस्करण'' 1990 ई.।

मिश्र, रमेशचन्द्र (संपादक)–सुन्दर ग्रंथावली (सर्वांगयोग प्रदीपिका), प्रकाशक– किताबघर, 24, अंसारीरोड, दरियागंज, नयी दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण–1992 ई.।